E-Library Best Practices in RIE Bhopal - 2021-22

Persistent endeavour on any professional activity makes it the best. Best practice is a method or technique that has been generally accepted as superior to any alternatives because it produces results that are superior to those achieved by other means or because it has become a standard way of doing things**.** Best practices are used to maintain quality as an alternative to mandatory legislated standards and can be based on self-assessment. Quality collection, quality of services, ICT integration, benchmarks and best practices adopted by the academic libraries are the main concerns of NAAC. Best practices improve users' maximum utilization of the library resources and quality of library services. In addition to the routine activities some best practices can be adopted and persistently practised in the academic libraries for the quality enhancement. RIE Bhopal Library has been constantly exploring innovative methods to meet users' information needs by improving efficiency and simplifying work processes through digital technologies.

Objectives of the e-Library

The primary objectives of establishing the e-Library in Regional Institute of Education, Bhopal are:

i. To enable library to manage very large amounts of digital information available in various forms like, e-books, online journals, databases, OA materials, Web materials, etc.
ii. To preserve unique collections through digitisation
iii. To preserve Institutional publications in digital form and provide online access to these materials.
iv. To provide faster access to information on campus and off campus
v. To facilitate dealing with data from more than one location
vi. To enhance distributed learning environments

E-Library of RIE, Bhopal

Library of the Institute is called as Learning Resource Centre, was established in 1964 with the aim to provide right impetus for the intellectual growth of students, teachers and researchers. It holds knowledge resources predominantly related to the subject 'Education' and provides access to various information resources on and around the subject stretching to latest books, journals and audio-visual materials. At present the Library has around 72,000 print and more than 2000 e-books, 128 print and 130 e-journals, 4 CD-ROM and on-line databases, Inflibnet N-List consortium materials, more than 5000 dissertations and reports, and many other Open Access downloaded materials.

Digital library of the Institute was established in the year 2012 and continuously growing with the collection of e-resources like: e-books, on-line journals, databases, Open Access materials, etc. for the students with the intension of learning at their own convenience. Students can have access and read the library digital materials in various digital format (e-Books, audio-books, videos, etc. on demand 24X7) anytime and anywhere using their preferred devices. The library is developed in hybrid model with the most advanced technological applications. The

library is now fully computerized with KOHA (LMS), DSpace based Instituional Repository (IR), RFID based circulation and security system, Joomla powered website and many state-of-art technologies. On-line Public Access Catalogue (OPAC) Kiosks facility is available in all halls of the Library and Web-OPAC access is through website.

E-Library System and Services:

The e-library of the Institute provides various services to users with the existing hardware, software, Internet and local network platforms available in the Institute library system. The e-Library comprises of the components like:

1. One High-end Server
2. LIBSYS open source software for library automation
3. Subscription of e-books, on-line journals, databases, OA materials, etc.
4. On campus access to users to use e-resources
5. Library website on Wordpress OS platform for single point access to e-resources
6. Use of Open Source Software (OSS) in different operations

Outcome of the Best Practice:

Prolonged use of technologies experienced to say that the innovative ways of using digital technologies increases the quality of services, sets benchmark and ultimately brings elevation in the image of the library among the user community. The major outcomes of the e-library are:

i. The usership of library materials increased multi fold involving virtual users.
ii. Library users got 24x7 access to library materials
iii. Remote access to the library materials could be possible
iv. The space problem and budget crunch could be managed by acquiring Open Access materials and using Open Source software.

In time to come, the digital library best practice will definitely help the Institute library motivating to meet the information requirements of users in best possible way.

विद्यया ऽ मृतमश्नुते

एन सी ई आर टी
NCERT

हैंडबुक एवं रपट

क्षेत्रीय शिक्षा संस्थान भोपाल के सेवा पूर्व शिक्षक प्रशिक्षुओं के लिए थिएटर कार्यशाला और प्रदर्शन

Regional Institute of Education, Bhopal
2021-22

अनुक्रम

क्रमांक	विषय–वस्तु	पृष्ठ संख्या
1.	प्रस्तावना	4
2.	आभार	6
3.	List of Resource Persons	8
4.	नाटकः एक परिचय	9
5.	नाटक के तत्व	12
6.	नाट्य शिक्षण के उद्देश्य	20
7.	नाटक शिक्षण/विधि प्रणाली	21
8.	नाट्य कला की भारतीय अवधारणा	23
9.	नाट्य कला की पाश्चात्य अवधारणा	25
10.	कक्षा में नाटक शिक्षण हेत प्रयुक्त सोपान	29
11.	दस दिवसीय नाट्य कार्यशाला का आयोजन	35

प्रस्तावना

शिक्षा का उद्देश्य विद्यार्थियों का सर्वांगीण विकास करना है । नाटक कला और सर्जना का श्रेष्ठ माध्यम है। इस दस दिवसीय नाट्य कार्यशाला का उद्देश्य विद्यार्थियों के सर्वांगीण विकास पर केंद्रित है। क्षेत्रीय शिक्षा संस्थान भोपाल विद्यार्थियों में रचनात्मकता के विकास का भरपूर अवसर प्रदान करता है, यह कार्यशाला उन्हीं मूल्यों की तलाश है। इससे विद्यार्थियों का जीवन,कला और रचनात्मक्ता का ही सम्पूर्ण विकास नहीं होगा अपितु नाट्य-कौशल के विकास से वे बेहतर अध्यापन कला का भी विकास कर सकेंगे । राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में जिन पारम्परिक विविध भारतीय कलाओं के माध्यम से शिक्षा देने की बात कही गयी है इस नाट्य कार्यशाला में उनका समाहार किया गया है । इससे विद्यार्थी बहुत कुछ सीखते हैं जैसे- मौखिक वाचन और लेखनशक्ति का विकास, भावनाओं का उद्दात्तीकरण और उनका व्यक्तित्व निर्माण, विवेक सम्पन्नता और भावनात्मक अभिव्यक्ति को सही दिशा और दृष्टि प्रदान करना, नाटक की अभिनेयता से जुडकर साहित्य की अन्य विधाओं से ज्ञान अर्जित करना, नैतिक मूल्यों के विस्तार से वैश्विक मूल्यों का निर्माण करना, जीवन दर्शन का तार्किक विकास करना, पारम्परिक संस्कार तथा संस्कृति दर्शन इतिहास समाज शास्त्र से नई पीढी को अवगत कराना तथा उनके बीच उदार दृष्टि का विकास करना, साहित्यिक विकास के पठन पाठन से भाषा-के विविध रूपों तथा उच्चारण कौशल में दक्षता,) रचनात्मक एवं सृजनात्मक प्रतिभा को पहचानना और उसका विकास करना, कल्पना लोक को तर्क संगत आधार पर रूपाकार करने की क्षमता का विकास करना, सामूहिक कला और प्रदर्शनकारी कला के महत्त्व को समझना, सामाजिक संबंधों से स्वयं को जोड कर देखने की दृष्टि का विकास करना आदि कई व्यापक उद्देश्यों की पूर्ति यहाँ सम्भव है।

कला माध्यम जीवन को सुव्यवस्थित करता है, जीवन को गतिशील बनाता है। बहुलतावादी, बहुपक्षीय, और अनेकता में एकता से भरपूर, बहुसांस्कृतिक देश के मिज़ाज़ और रवायत को समझने हेतु भारत की पारम्परिक कला को समझना बेहद जरूरी है। हम भारत को समझकर भारतीय ज़मीन को समझकर सुखी,सुंदर और कलात्मक समाज बनाने में खुद को तैयार कर सकें। समझ को विकसित करने हेतु नाटक ज्ञान का एक बडा अस्त्र है और हमारी संस्कृति का अभिन्न अंग है- नाटक । भाषा और समझ का गहरा संबंध है। शिक्षा में समझ की जरुरत को विकसित करने की नीतियाँ एक रचनात्मक सोच का परिणाम लेकर आती है। संवेदनात्मक

विकास हेतु समझ के विकास की जरुरत है. समझ विकसित होने से ही रचनात्मकता का विकास होगा इन सबके केंद्र में नाटक है !

हमारा जीवन विविधताओं का कोलाज है विविधता हमारी ताक़त है । हमारा मकसद विद्यार्थियों को सिर्फ पाठ्यक्रम में पारंगत नहीं बनाना है अपितु उन्हें बेहतर और बृहत्तर मनुष्य बनाना है। ज्ञान की उस परम्परा से जोडना है जिसमें वे तर्क,विवेक,वैज्ञानिकता और स्वस्थ रचनात्मकता के साथ गतिशील जीवन से जुड सकें। हमारे विद्यार्थी इस बात को समझें कि इस 21वीं सदी में वे भारत की ताक़त हैं और हमारी संस्कृति के संरक्षक भी।

आभार

सर्वप्रथम एनसीईआरटी नई दिल्ली का आभार। एनसीईआरटी के निदेशक प्रो. दिनेश प्रसाद सकलानी जी का आभार, संयुक्त निदेशक प्रो. श्रीधर श्रीवास्तव जी का विशेष आभार। क्षेत्रीय शिक्षा संस्थान, भोपाल का आभार जो इस पुनीत कार्य में मेरा भरपूर सहयोग दिया, संस्थान के प्राचार्य प्रो. वी. के. ककडिया जी, प्रो. बी रमेश बाबू जी (अधिष्ठाता शोध), प्रो. जयदीप मंडल जी, प्रो. आई.बी चुगतई जी का आभार। विस्तार शिक्षा विभाग के अध्यक्ष प्रो. प्रवीण कुलश्रेष्ठ जी का अथाह स्नेह, सहयोग हमारी नाट्य कार्यशाला को प्राप्त हुआ है, आपका बहुत-बहुत आभार। प्रो. राजेश खम्भायत जी, संयुक्त निदेशक,पंसुंशके व्यावसायिक शिक्षा संस्थान, भोपाल के साथ-साथ अपने संस्थान के सभी वरिष्ठ सहकर्मियों के सहयोग से यह कार्यक्रम सम्भव हो पाता है, मैं प्रो. निधि तिवारी जी (अध्यक्ष,सामाजिक विज्ञान एवं मानविकी शिक्षा विभाग) प्रो. रत्नमाला आर्या जी(अध्यक्ष शिक्षा विभाग) प्रो. लल्लन कुमार तिवारी जी (अध्यक्ष, विज्ञान एवं गणित शिक्षा विभाग), प्रो. चित्रा सिंह जी(मुख्य सलाहकार, छात्र परिषद), डॉ. निताई चरण ओझा जी(अध्यक्ष अकादमिक शाखा, अध्यक्ष स्टूडियो) डॉ. अश्वनी कुमार गर्ग जी (मुख्य छात्रावास अधीक्षक), सभी छात्रावासों के अधीक्षक गण यथा श्री लोकेंद्र सिंह चौहान जी, डॉ. वांथांग पुई जी, डॉ. कल्पना मस्की जी, डॉ श्रुति त्रिपाठी जी,डॉ. संगीता पेठिया जी, डॉ. सौरभ कुमार जी, डॉ. गंगा महतो जी एवं श्री महेश आसुदानी(प्राशसनिक अधिकारी), श्री कमलेश तायल जी (वित्त अधिकारी),श्री संजय गोखे जी (सुरक्षा प्रभारी) और समस्त संस्थान परिवार के प्रति आभार।

श्री सौरभ अनंत जी ने 'हास्य चूडामणि' नाटक और इस दस दिवसीय कार्यशाला का निर्देशन किया, सौरभ जी का सर्वाधिक आभार, श्री हेमंत देवलेकर(संगीत निर्देशन), सुश्री श्वेता केतकर सहित विहान ड्रामा वर्क्स के सभी कलाकार मित्रो यथा- सुश्री निवेदिता सोनी, श्री शुभम कटियार, सुश्री तेजस्विता अनंत, श्री अंकित पारोचे, श्री कार्तिकेय आप सबका बहुत-बहुत आभार विहान समूह के सहयोग और अनथक श्रम से ही यह कार्यशाला सम्भव हो पाया!

अंत में इस कार्यक्रम के सह संयोजक डॉ. सुरेश मकवाणा जी जिन्होने हमारे साथ अथाह श्रम किया आपका विशेष आभार। इस कार्यक्रम से जुडे सभी विद्यार्थियों का आभार।

-डॉ. अरुणाभ सौरभ

LIST OF RESOURCE PERSONS

External Resource Persons;

1. Mr. Saurav Anant, Vihan Drama Works, Bhopal
2. Mr. Hemant Deolekar, Vihan Drama Works, Bhopal
3. Ms. Shweta Ketkar, Vihan Drama Works, Bhopal

Name of Internal Resource Persons:

1. Dr. S.K. Makwana
2. Dr. Saurabh Kumar
3. Dr. Sonal Sharma
4. Dr. Niteen Kumar Ramteke
5. Dr. Gajendra Kumar Pandey
6. Dr. Nilima Tirkey
7. Dr. Shivani Saini
8. Dr. Anandraj M.
9. Dr. M.S. Kariyappa

नाटकः एक परिचय

नाटक साहित्य की प्राचीनतम और प्रायोगिक विधा है । नाटक में कला के सभी स्वरूप और विज्ञान की दृश्य-श्रव्य व्यवस्था का सम्पूर्ण अनुपालन किया जाता है । इस विधा के साहित्य की तमाम विधाओं का समावेश है । नाटक को ध्यान में रखकर ही साहित्यशास्त्र के सभी सिद्धांत बने हैं। नाटक शब्द की उत्पत्ति 'नट धातुसे हुई है जिसका तात्पर्य है—अभिनय।

संस्कृत साहित्य में इसे ' रूपक ' नाम भी दिया गया है।

नाटक का अर्थ है ' नट ' |

कार्य अनवीकरण में कुशल व्यक्ति संबंध रखने के कारण ही विधा में नाटक कहलाते हैं।

वस्तुतः नाटक , साहित्य की वह विधा है , जिसकी सफलता का परीक्षण रंगमंच पर होता है। किंतु रंगमंच युग विशेष की जनरुचि और तत्कालीन आर्थिक व्यवस्था पर निर्भर होता है इसलिए समय के साथ नाटक के स्वरुप में भी परिवर्तन होता है।

'काव्येषुंनाटकंरम्यम् —संस्कृत का यह कथन नाटक पर बिल्कुल सटीक बैठता है ।

संस्कृत नाट्यपरम्परा में भी नाटक काव्य है और एक विशेष प्रकार का काव्य है, ..दृश्यकाव्य। 'काव्येषु नाटकं रम्यम्' कहकर उसकी विशिष्टता ही रेखांकित की गयी है।

लेखन से लेकर प्रस्तुतीकरण तक नाटक में कई कलाओं का संश्लिष्ट रूप होता है-तब कहीं वह अखण्ड सत्य और काव्यात्मक सौन्दर्य की विलक्षण सृष्टि कर पाता है। रंगमंच पर भी एक काव्य की सृष्टि होती है विभिन्न माध्यमों से, कलाओं से जिससे रंगमंच एक कार्य का, कृति का रूप लेता है। आस्वादन और सम्प्रेषण दोनों साथ-साथ चलते हैं। अनेक प्रकार के भावों, अवस्थाओं से युक्त, रस भाव, क्रियाओं के अभिनय, कर्म द्वारा संसार को सुख-शान्ति देने वाला यह नाट्य इसीलिए हमारे यहाँ विलक्षण कृति माना गया है।

आचार्य भरत ने नाट्यशास्त्र के प्रथम अध्याय में नाट्य को तीनों लोकों के विशाल भावों का अनुकीर्तन कहा है तथा इसे सार्ववर्णिक पंचम वेद बतलाया है। भरत के अनुसार ऐसा कोई ज्ञान शिल्प, विद्या, योग एवं कर्म नहीं है जो नाटक में दिखाई न पड़े -

न तज्ज्ञानं न तच्छिल्पं न सा विद्या न सा कला।
न स योगो न तत्कर्म नाट्ऽयेस्मिन् यन्न दृष्यते॥

संस्कृत नाटकों की रचना के मूल में प्रमुख उद्देष्य दुःखी, थके हुये एवं शोक से त्रस्त लोगों का मनोरंजन करना रहा है जैसा कि नाट्यशास्त्र के प्रथम अध्याय में भरतमुनि ने लिखा हैः-

दुःखार्तानां श्रमार्तानां शोकार्तानां तपस्विनाम्।
विश्रामजननं लोके नाट्यमेतद् भविष्यति॥
विनोदजननं काले नाट्यमेतद् भविष्यति।।।

नाटक के माध्यम से हम कला के समस्त स्वरूपों में प्रविष्ट होते हैं। नाटक जहाँ कला का एक श्रेष्ठ माध्यम है, एक समेकित माध्यम है वहीं नाटक में प्रकाश व्यवस्था, ध्वनि व्यवस्था और वैज्ञानिक उपकरणों का उपयोग होता है । नाटक के माध्यम से एक शिक्षार्थी का सर्वांगीण विकास होता है इसीलिए शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया में नाटक बहुत उपयोगी और सार्थक सिद्ध हो सकता है । ज्ञान के समस्त अनुशासनों को नाटक के माध्यम से हम सुगमता पूर्वक पढा सकते हैं । नाट्य शिक्षण की मदद से हम सभी विषयों को सरलतापूर्वक पढा सकते हैं। इसकी भूमिका तब और महत्वपूर्ण हो जाती है जब आधुनिक तकनीक से जोडकर कक्षा में सर्वसुलभ बनाने के साथ ही विद्यार्थियों की रुचि को विकसित किया जा सकता है।

नाटक को ध्यान में रखकर ही साहित्य शास्त्र के सभी सिद्धांतों की निर्मिति हुई है । नाटकीय कथानक ऐसा होना चाहिए जिसका बहिरंग पक्ष और अंतरंग पक्ष में आकर्षक तत्व सम्मिलित हो। किसी भी नाटक में देश काल, वातावरण बहिरंग पक्ष है और पात्रों की परिकल्पना अंतरंग पक्ष है। जिस समय कथानक का प्रयोग होता है उस समय का युगीन परिवेश, रहन-सहन, भाषा और संवादों का जीता जागता वर्णन होना चाहिए।

नाटक के तत्व

नाटक

नाटक दृश्य काव्य का एक प्रकार है ।

संवादों में या कथोपकथन में कही गई कथा ही नाटक है । प्रत्येक कथा के मूल में जिज्ञासा होती है। जिज्ञासा के बिना कहानी अच्छी नहीं होती । कथा का चलन्त रूप ही नाटक है।

नाटक में क्रिया व्यापार का होना जरूरी है | यह क्रिया व्यापार पात्रों का होता है | क्रिया व्यापार में संवादों का होना अति आवश्यक है। क्रिया व्यापार ही अभिनय है ।

नाटक - रंगमंच

क्रियाल्यापार

अभिनय

संवाद

कथा

मंचन के लिए लिखी जाने वाली कथा जिसमें संवाद हो नाटक कहलाती है।

नाटक के तत्व

'नाटक के छः तत्व माने जाते हैं -

(क) कथावस्तु

(ख) पात्र और चरित्र चित्रण

(ग) संवाद / कथोपकथन

(घ) देशकाल / वातावरण

(ङ) भाषा शैली

(च) उद्देश्य

(क) कथावस्तु : कथावस्तु नाटक' का सबसे महत्वपूर्ण तत्व है। इसके बिना नाटक की कल्पना नहीं की जा सकती। विभिन्न आधारों पर कथावस्तु (नाटकीय) के भेद किए जाते हैं

(1) प्रसार की दृष्टि से - प्रसार की दृष्टि से कथावस्तु के दो प्रकार होते हैं -

(i) आधिकारिक (ii) प्रासंगिक

(i) आधिकारिक कथावस्तु **-** वैसी कहानियाँ जो शुरू से अंत तक चलती है, उसे आधिकारिक कथावस्तु कहते हैं। इसी कथा के नायक को ही अंततः फल प्राप्त होता है।

जैसे - राम की कथा आधिकारिक कथा है।

(ii) प्रासांगिक - वैसी कथाएँ जो प्रसंगवश बीच-बीच में आकर आधिकारिक कथा को आगे बढ़ाने में योग है, उसे ही प्रासांगिक कथा कहते हैं। घटना को आगे बढ़ाने के लिए प्रासांगिक कथा का होना अत्यावश्यक होता है।

जैसे अंगद, मंथरा, हुनुमान, विभीषण की "कथा राम कथा को आगे बढ़ाती है।

प्रसांगिक कथावस्तु के दो उपभेद होते हैं -

(क) पताका

(ख) प्रकरी

(क) पताका **-** वैसी प्रासांगिक कथाएँ जो मुख्य कथा के साथ लगातार या लंबे समय 'तक चलती रहे उसे पताका कहते हैं। जैसे- रामकथा में हनुमान, अंगद, सुग्रीव की कथाएँ

(ख) प्रकरी - वैसी प्रासांगिक कथाएं जो सिर्फ एक बार मुख्य कथा में योग देकर चली जाती है उसे प्रकरी कहते हैं। जैसे - रामकथा में - सबरी, केवट, मंथरा आदि की उपकथा

2) विषयवस्तु की दृष्टि से नाटकीय कथाएँ - तीन प्रकार की होती है

(i) प्रख्यात

(ii) उत्पाठ्य

(iii) मिश्र

(i) प्रख्यात - वैसी कथावस्तु जो इतिहास, पुराण या लोक प्रसिद्ध घटनाओं पर आधारित हो उसे प्रख्यात कथावस्तु कहते हैं।

(ii) उत्पाठ्य - वैसी कथावस्तु जो कल्पना पर आधारित हो। ऐसी कथा को लेखक अपनी कल्पना शक्ति से उत्पन्न करता है।

(ii) मिश्र - वैसी कथा जिसमें इतिहास और कल्पना दोनों का मिश्रण हो उसे मिश्र कथा कहते हैं

3) अभिनय की दृष्टि से नाटकीय कथावस्तु के दो भेद -

(i) दृश्य

(ii) सूच्य

(i) दृश्य - कथावस्तु के जिस हिस्से को हम परदे/ रंगमंच पर उतारते हैं, उसे दृश्य कहते हैं।

(ii) सूच्य - वैसी कथावस्तु जिसे हम देख नहीं पाते, केवल परदे के पीछे से उसकी सूचना दे दी जाती है इसे सूच्य कथावस्तु कहते हैं।

सूच्य कथावस्तु के भी पाँच उपभेद होते हैं -

(क) विषकम्भक

(ख) प्रवेशक

(ग) चूलिका

(घ) अंकास्य

(ड.) अंकावतार

(क) विषकम्भक - इसके अंतर्गत दो उच्चवर्ग के पात्र संस्कृत भाषा में सूचना देते हैं। ये पात्र नाटक के प्रारंभ, मध्य या अंत किसी भी समय आ सकते हैं ।

(ख) प्रवेशक - इसमें भी दो व्यक्ति होते हैं लेकिन ये दोनों निम्न वर्ग के होते हैं और ये प्राकृत या जनभाषा के माध्यम से सूचना देते हैं। यह नाटक के शुरू में नहीं बल्कि बीच-बीच में आकर सूचना दे सकता है।

(ग) चूलिका - वैसे पात्र जो पर्दे के पीछे से ही सूचना देता है, उसे चूलिका कहते हैं।

(घ) अंकास्य - जब कोई पात्र अभिनय करते हुए अंत में अगले अंक की सूचना देता है उसे अंकास्य कहते हैं।

(ड.) अंकावतार' - जब एक पात्र एक अंक के बाद दूसरे अंक में भी अभिनय करता है। अर्थात् एक पात्र जब बार-बार अभिनय करता है तो उसे ही अंकावतार कहते हैं ।

(4) संवाद की दृष्टि से नाटकीय कथावस्तु के तीन भेद होते हैं –

(i) सर्वश्राव्य

(ii) नियंत श्रव्य

(iii) अश्राव्य

(i) सर्वश्राव्य - जिस संवाद को सभी लोग सुन सकें उसे 'सर्वश्राव्य' संवाद कहते हैं ।

(ii) नियंत श्राव्य - जिस संवाद को सभी नहीं बल्कि निर्धारित व्यक्ति ही सुन सकें उसे नियंत कहते हैं। स्वगत - कथन इसका श्राव्य उदाहरण है।

(iii) अश्राव्य - जिस संवाद को कोई नहीं सुन सके उसे अश्राव्य कहते हैं।

कथा-विन्यास

कथा विन्यास नाटक में शुरू से अंत तक चलती रहती है। कथा के व्यवस्थित ढंग को ही कथा विन्यास कहते हैं। कथा कहाँ से और कैसे शुरू और अंत होता है, इसके व्यवस्थित रूप को ही कथाविन्यास कहते हैं ।

कथा विन्यास के तीन तत्व या अवस्थाएँ है

(क)अर्थप्रकृतियाँ

(ख) कार्य की अवस्था

(ग) संधियाँ

(क) अर्थ प्रकृतियाँ - अर्थप्रकृतियाँ वे साधन है जो कथा को फलागम की ओर अग्रसर करती है। इसके पाँच प्रकार होते हैं जिसको आगे चार्ट द्वारा दिखाया जाएगा।

(ख) कार्य की अवस्था - कथा विन्यास की इस अवस्था में फल की प्राप्ति के लिए कार्य किया जाता है। इसके भी पाँच प्रकार है ।

(ग) संधियाँ - इसमें अर्थ प्रकृतियाँ और कार्य की अवस्था को मिलाया जाता है।

अर्थ प्रकृतियाँ	कार्य की अवस्था	संधियाँ

बीज	आरंभ	मुख
बिन्दु	प्रयत्न	प्रतिमुख
पताका	प्रत्याशा	गर्म
प्रकरी	निमतापि (नियत प्राप्ति)	विमर्श
कार्य	फलागमन	निर्वहन

कथा को प्रारंभ करने की अवस्था को ही वीज कहते हैं। जिस प्रकार किसान खेत में बीज - बोता है तब पौधा और फल प्राप्त होता है ठीक उसी प्रकार लेखक या नाटककार कथा को बीजावस्था से शुरू करता है तो वह कार्य अवस्था से आरंभ होता है जिसे मुख कहते हैं। नायक किसी बिन्दु से फल की प्राप्ति के लिए प्रयत्न करते हैं। इसमें फल प्राप्ति के लिए प्रयास किया जाता है जिसे प्रतिमुख कहते हैं । पताका के अनुसार नायक लंबे समय तक संघर्ष करके फल प्राप्त करने की आशा में लगा रहता है। इसे ही गर्म (कथा की गर्भावस्था) कहते हैं। जब नायक अन्य लोगों से (प्रकरी) सहायता प्राप्त कर फल की प्राप्ति के नजदीक

पहुँच जाता है तब उसे यह अनुभव होने लगता है कि अब फल की प्राप्ति तय है। उसे विमर्श कहते हैं । जब नायक सभी कार्य को कर लेता है तब फल का आगमन होता है जिसे निर्वहण कहते हैं।

भारतीय नाटक और पाश्चात्य नाटक में अंतर -

भारतीय नाटक का अंत सुखान्त (Comedy - कामदी) होता है ।

- पाश्चात्य नाटक दुखांत (Aregoly - त्रासदी) होता है।

(ख) पात्र और चरित्र - चित्रण - कथावस्तु को आगे बढ़ाने के लिए ही पात्र होते हैं। पात्र कहानी को बदल भी सकता हैं या उसी में अपना जीवन बिता सकता है। जैसी कहानी होगी वैसा पात्र होगा और पात्र जैसा होगा कहानी वैसी होगी।

यह नाटक की प्रमुख विशेषता है।

नाटक को नाटक के तत्व प्रदान करने का श्रेय इसी को है।

यही नाट्यतत्व का वह गुण है जो दर्शक को अपनी ओर आकर्षित कर लेता है।

इस संबंध में नाटककार को नाटकों के रूप , आकार , दृश्यों की सजावट और उसके उचित संतुलन , परिधान , व्यवस्था , प्रकाश व्यवस्था आदि का पूरा ध्यान रखना चाहिए। दूसरे शब्दों में लेखक की दृष्टि रंगशाला के विधि – विधानों की ओर विशेष रुप से होनी चाहिए इसी में नाटक की सफलता निहित है।

पात्र चार प्रकार के होते हैं –

(i) धीर ललित

(ii) धीर प्रशांत

(iii) धीरोद्धत

(iv) धीरोदात

(i) धीर ललित- ऐसा नायक कलाप्रेमी होता है। इसमें कला का सभी गुण पाया जाता है।

(ii)धीर प्रशांत - ऐसा नायक गंभीर स्वभाव का होता है। प्रशांत महासागर की तरह गंभीर और धैर्यवान होता है।यह काफी गंभीरता से सोच विचारकर कोई निर्णय लेता है।

(iii) धीरोद्धत - ऐसा पात्र क्रोधी और घमंडी होता हैं ।

(iv) धीरोदात - यह पात्र धैर्यवान ,उदावादी, त्यागी, सत्यनिष्ठ, होता है ।

(ग) संवाद / कथोपकथन - संवाद' या कथोपकथन नाटक का प्राण होता है । कथा विकास और पात्रों के चरित्र चित्रण का 'एकमात्र साधन संवाद या कथोपकथन तत्व ही है। इसके बिना नाटक संभव ही नहीं है। संवाद के माध्यम से, एक पात्र दूसरे पात्र से परस्पर बात करते हुए कथा का विकास करते हैं।

- नाटक में नाटकार के पास अपनी और से कहने का अवकाश नहीं रहता।
- वह संवादों द्वारा ही वस्तु का उद्घाटन तथा पात्रों के चरित्र का विकास करता है।
- अतः इसके संवाद सरल , सुबोध , स्वभाविक तथा पात्रअनुकूल होने चाहिए।
- गंभीर दार्शनिक विषयों से इसकी अनुभूति में बाधा होती है।
- इसलिए इनका प्रयोग नहीं करना चाहिए।

नीर सत्ता के निरावरण तथा पात्रों की मनोभावों की मनोकामना के लिए कभी-कभी स्वागत कथन तथा गीतों की योजना भी आवश्यक समझी गई है।

(घ) देशकाल/वातावरण - वे परिस्थितियाँ जिन परिस्थितिओ में नाटक लिखा जाता है उसे नाटक का देशकाल करते हैं। रंग संकेत, मंचसज्जा अथवा पात्रों की वेशभूषा और संवाद से देशकाल या वातावरण का निर्माण किया जाता है। देशकाल वातावरण के चित्रण में नाटककार को युग अनुरूप के प्रति विशेष सतर्क रहना आवश्यक होता है। पश्चिमी नाटक में देशकाल के अंतर्गत संकलनअत्र समय स्थान और कार्य की कुशलता का वर्णन किया जाता है। वस्तुतः यह तीनों तत्व ' यूनानी रंगमंच ' के अनुकूल थे। जहां रात भर चलने वाले लंबे नाटक होते थे और दृश्य परिवर्तन की योजना नहीं होती थी।

परंतु आज रंगमंच के विकास के कारण संकलन का महत्व समाप्त हो गया है।

भारतीय नाट्यशास्त्र में इसका उल्लेख ना होते हुए भी नाटक में स्वाभाविकता, औचित्य तथा सजीवता की प्रतिष्ठा के लिए देशकाल वातावरण का उचित ध्यान रखा जाता है। इसके अंतर्गत पात्रों की वेशभूषा तत्कालिक धार्मिक, राजनीतिक, सामाजिक परिस्थितियों में युग का विशेष स्थान है।

अतः नाटक के तत्वों में देशकाल वातावरण का अपना महत्व है।

(ड़) भाषा शैली - जिस भाषा शैली में नाटक लिखा जाता है उसे उस नाटक की भाषा शैली कहाँ जाता है । नाटक की भाषा शैली सरल, चिताकर्षक, प्रवाहमय, पात्रानुकूल, प्रसंगानुकूल होनी चाहिए । नाटक सर्वसाधारण की वस्तु है अतः उसकी भाषा शैली सरल, स्पष्ट और सुबोध होनी चाहिए , जिससे नाटक में प्रभाविकता का समावेश हो सके तथा दर्शक को क्लिष्ट भाषा के कारण बौद्धिक श्रम ना करना पड़े अन्यथा रस की अनुभूति में बाधा पहुंचेगी।

अतः नाटक की भाषा सरल व स्पष्ट रूप में प्रवाहित होनी चाहिए।

नाटक की भाषा में उत्सुकता बनाए रखने की क्षमता होनी चाहिए | लेखक की भाषा ही भाषा शैली है।

(च) उद्येश्य - "यह तत्व नाटक मेरुदंड हैं। किसी भी नाटक का कुछ न कुछ उद्देश्य होता है। नाटक की सार्थकता ही उद्देश्य हैं। बिना उद्देश्य कोई नाटक नहीं लिखा जा सकता है। मानव मन को संतुष्ट और लोकमंगल करना नाटक का स्थायी उद्देश्य है ।

सामाजिक के हृदय में रक्त का संचार करना ही नाटक का उद्देश्य होता है। नाटक के अन्य तत्व इस उद्देश्य के साधन मात्र होते हैं। भारतीय दृष्टिकोण सदा आशावादी रहा है इसलिए संस्कृत के प्रायः सभी नाटक सुखांत रहे हैं। पश्चिम नाटककारों ने या साहित्यकारों ने साहित्य को जीवन की व्याख्या मानते हुए उसके प्रति यथार्थ दृष्टिकोण अपनाया है उसके प्रभाव से हमारे यहां भी कई नाटक दुखांत में लिखे गए हैं , किंतु सत्य है कि उदास पात्रों के दुखांत अंत से मन खिन्न हो जाता है।

नाट्य शिक्षण का उद्देश्य

नाटक शिक्षण का उद्देश्य -

1. विभिन्न जीवन दर्शनक का ज्ञान नाटक के माध्यम से ।

2. संवाद शिक्षा - समाज के अनेक आयु वर्ग, ज्ञानवर्ग के लोगों के साथ किसी प्रकार का व्यवहार करना, बातचीत करना, सम्वाद करना यह सब नाटक शिक्षण के द्वारा ही सम्भव है । विद्यार्थियों में सम्वाद शैली का विकास होता है ।

3. अनुकरणशीलता - अनुकरण मानव समाज का स्वाभाविक गुण है। नाटक द्वारा अनुकरण की तृप्ति होती है । विद्यार्थी कलाकार संवाद बोलना अनुकरण के द्वारा सीखता है और प्रयोग करता है ।

4. वैयक्तिक स्वभाव का अध्ययन - नाटक शिक्षण द्वारा व्यक्ति स्वभाव का ज्ञान करना और अध्ययन करना आसान हो जाता है इससे सीखने की प्रक्रिया गतिशील हो जाती है।

5. विद्यार्थी को विभिन्न परिस्थितियों का ज्ञान हो जाएगा और उसे समाधान करने में आसानी होगी।

6. भावाभिव्यक्ति - नाटकमे शब्दक प्रयोग भाव के अनुसार होते हैं । नाटक में गति-यति, विराम, आरोह-अवरोह भाव के अनुकूल प्रस्तुत किए जाते हैं ।

7. स्वस्थ मनोरंजन - नाटक द्वारा विद्यार्थी को स्वस्थ मनोरंजन प्रदान किया जा सकता है।

8. विद्यार्थियों में अभिनय कला का विकास और निपुणता।

9. विद्यार्थियों में प्राचीन एवं आधुनिक संस्कृति के यथार्थ जीवन से परिचिति एवं सांस्कृतिक मूल्यों का विकास ।

10. विद्यार्थियों में शब्द भंडार, सूक्ति भंडार संवाद लेखन और कथा के नाट्यकला कौशल में वृद्धि ।

11. विद्यार्थियों में निरीक्षण, कल्पनाशीलता, सृजनात्मकता, विवेचन तथा बोध क्षमता का विकास ।

नाटक शिक्षण विधि/प्रणाली (**Methods of teaching Play/Drama**)

1. अर्थकथन प्रणाली (Methods of telling the meaning)
2. विश्लेषण प्रणाली
3. व्याख्या प्रणाली
4. समीक्षा प्रणाली
5. रंगमंच अभिनय प्रणाली
6. कक्षाभिनय
7. संयुक्त प्रणाली

रंगमंचीय एंव अभिनेय प्रणाली - यह नाटय शिक्षण की सबसे महत्वपूर्ण प्रणाली है। जिसे मंच पर प्रत्यक्ष देखा जा सकता है। यही इसका सबसे सार्थक एंव महत्वपूर्ण पक्ष भी है जो इसे अन्य विधाओं से अलग भी करता है। नाटक की सार्थकता तथा मौलिक अस्तित्व तो अभिनय में ही है। इससे यह स्पष्ट होता है कि नाटक-शिक्षक की सर्वोत्तम प्रणाली है रंगमंच पर उसका वास्तविक प्रदर्शन, प्रस्तुतीकरण में है। यही कारण है कि इस प्रणाली को 'रंगमंचीय एवं अभिनेय प्रणाली' भी कहते हैं। इस प्रणाली में छात्रों को वास्तविक अनुभव प्राप्त होता है। वे सक्रिय होकर कथोपकथन याद करते हैं, उच्चारण शुद्ध करते हैं, भावपूर्ण ढंग से बोलना सीखते तथा उसका अभ्यास करते हैं और इस प्रकार नाटक के संदेश को आत्मसात् भी करते हैं। किंतु, इस प्रणाली में सभी छात्रों को नाटक में भाग लेने का अवसर नहीं मिल पाता। साथ-साथ यह प्रणाली समय, श्रम एवं व्ययसाध्य है। इन दोषों के होते हुए भी यह प्रयोग अथवा रंगमंच-अभिनय-प्रणाली नाटक शिक्षण की सर्वोत्तम प्रणाली है।

कक्षाभिनय प्रणाली - कक्षाभिनय प्रणाली में शिक्षक के निर्देशन में छात्र विभिन्न पात्रों के रूप में कक्षा में अभिनय करते हैं। इसमें न तो रंगमंच का निर्माण होता है और न ही छात्रों को विभिन्न पात्रों के अनुरूप पोशाक ही पहनना पडता है। इसमें नाटक के विभिन्न पात्रों के रूप में कार्य करनेवाले छात्र वर्ग के सम्मुख अपने-अपने संवाद का भावपूर्ण ढंग से पाठ करते हैं। हाँ, गीत वगैरह का भावपूर्ण ढंग से पाठ भर कर दिया जाता, उसका गायन नहीं होता। कक्षा-अभ्यास-प्रणामी में वाद्य यंत्रों का भी प्रयोग नहीं किया जाता है। इस प्रणाली से शिक्षण में

रंगमंच-प्रणाली के सभी गुण तो नहीं हैं, किंतु बहुत अंशों में यह उसके निकट है। इतना ही नहीं, इसमें समय, धन तथा श्रम तीनों की बचत होती है। उद्देश्यों की प्राप्ति में यह प्रणाली अत्यधिक कारगर है। इसमें छात्र में क्रियाशीलता, मनोरंजन तथा विषय का स्पष्टीकरण प्रत्यक्ष रूप से हो जाता है। यह प्रणाली प्रस्तुत स्थिति में सर्वाधिक उपयोगी तथा सफल है।

नाट्य कला की भारतीय अवधारणा

नाट्यकला का विकास सर्वप्रथम भारत में ही हुआ। ऋग्वेद के कतिपय सूत्रों में यम और यमी, पुरुरवा और उर्वशी आदि के कुछ संवाद हैं। इन संवादों में लोग नाटक के विकास का चिह्न पाते हैं। अनुमान किया जाता है कि इन्हीं संवादों से प्रेरणा ग्रहण कर लोगों ने नाटक की रचना की और नाट्यकला का विकास हुआ। यथासमय भरतमुनि ने उसे शास्त्रीय रूप दिया। भरत मुनि ने अपने नाट्यशास्त्र में नाटकों के विकास की प्रक्रिया को इस प्रकार व्यक्त किया है:

नाट्यकला की उत्पत्ति दैवी है, अर्थात् दु:खरहित सत्ययुग बीत जाने पर त्रेतायुग के आरंभ में देवताओं ने स्रष्टा ब्रह्मा से मनोरंजन का कोई ऐसा साधन उत्पन्न करने की प्रार्थना की जिससे देवता लोग अपना दु:ख भूल सकें और आनंद प्राप्त कर सकें। फलत: उन्होंने ऋग्वेद से कथोपकथन, सामवेद से गायन, यजुर्वेद से अभिनय और अथर्ववेद से रस लेकर, नाटक का निर्माण किया। विश्वकर्मा ने रंगमंच बनाया आदि आदि।

नाटकों का विकास चाहे जिस प्रकार हुआ हो, संस्कृत साहित्य में नाट्य ग्रंथ और तत्संबंधी अनेक शास्त्रीय ग्रंथ लिखे गए और साहित्य में नाटक लिखने की परिपाटी संस्कृत आदि से होती हुई हिंदी को भी प्राप्त हुई। संस्कृत नाटक उत्कृष्ट कोटि के हैं और वे अधिकतर अभिनय करने के उद्देश्य से लिखे जाते थे। अभिनीत भी होते थे, बल्कि नाट्यकला प्राचीन भारतीयों के जीवन का अभिन्न अंग थी, ऐसा संस्कृत तथा पालि ग्रंथों के अन्वेषण से ज्ञात होता है। कौटिल्य के अर्थशास्त्र से तो ऐसा ज्ञात होता है कि नागरिक जीवन के इस अंग पर राज्य को नियंत्रण करने की आवश्यकता पड़ गई थी। उसमें नाट्यगृह का एक प्राचीन वर्णन प्राप्त होता है। अग्निपुराण, शिल्परत्न, काव्यमीमांसा तथा संगीतमार्तंड में भी राजप्रसाद के नाट्यमंडपों के विवरण प्राप्त होते हैं। इसी प्रकार महाभारत में रंगशाला का उल्लेख है और हरिवंश पुराण तथा रामायण में नाटक खेले जाने का वर्णन है।

इतना सब होते हुए भी यह निश्चित रूप से पता नहीं लगता कि वे नाटक किस प्रकार के नाट्यमंडपों में खेले जाते थे तथा उन मंडपों के क्या रूप थे। अभी तक की खोज के फलस्वरूप सीतावंगा गुफा को छोड़कर कोई ऐसा गृह नहीं मिला जिसे साधिकार नाट्यमंडप कहा जा सके।

पाश्चात्य विद्वानों की भी धारणा है कि धार्मिक कृत्यों से ही नाटकों का प्रादुर्भाव हुआ। इससे रंगस्थली (यदि वास्तव में उसे रंगस्थली की संज्ञा दी जा सके) के प्रारंभिक स्वरूप की कल्पना की जा सकती है कि वह वृत्ताकर रही होगी। धीरे-धीरे जब दर्शनीयता की ओर अधिक ध्यान दिया गया होगा, तब यह अनुभव किया गया होगा कि इस वृत्ताकार रंगस्थली में केवल आगे के कुछ दर्शक की दृश्य का पूरा आनंद उठा सकते हैं, पीछे बैठनेवालों को सिर उठाने की

आवश्यकता होती है। इस दृष्टि से कटोरानुमा स्थान रंगस्थली के लिए अधिक उपयुक्त समझा जाने लगा होगा। धार्मिक कृत्यों और नृत्य आदि के लिए यह उत्तम प्रबंध था। धीरे-धीरे जब नाटकों का रूप अधिक विकसित हुआ, तब यह अनुभव हुआ होगा कि कथाकार और अभिनेताओं के सामने की ओर बैठनेवालों को ही देखने और सुनने की अच्छी सुविधा होती है। इसके लिए पर्वतीय स्थानों में घाटी बहुत उपयुक्त प्रतीत हुई होगी, जिसमें ढाल पर बैठे दर्शक नीचे अभिनेताओं को भली भाँति देख सुन सकते थे और उनके पीछे फैला हुआ विस्तृत भूखंड सहज सुंदर चित्रित प्राकृतिक पृष्ठभूमि प्रस्तुत करता था। शायद इसी का अनुकरण अपर्वतीय पृष्ठभूमि प्रस्तुत करता था। शायद इसी का अनुकरण अपर्वतीय स्थानों में कृत्रिम रंगशालाएँ बनाकर किया गया, जिनमें वृत्ताकार दीवार के अंदर सीढ़ीनुमा स्थान दर्शकों के बैठने के लिए होता था, जो भीतर बने ऊँचे चबूतरे को तीन ओर से घेरे रहता था। चौथी ओर सीधी दीवार होती थी, जिसमें सुंदर चित्रकारी होती थी। इसके पीछे नेपथ्य होता था। जहाँ अभिनेताओं के उठने बैठने और उनकी रूपसज्जा का प्रबंध रहता था। उपर्युक्त चिरप्रतिष्ठित रंगशाला के प्राचीन रूपों में धीरे-धीरे सुधार होता गया। कालांतर में प्रेक्षास्थान तीन ओर के बजाय केवल एक ओर, सामने ही सामने रह गया। सारा विन्यास गोल से बदलकर चौकोर हो गया और नाट्यशाला का आधा, या इससे भी अधिक स्थान घेरने लगा।

नाट्य कला की पश्चात्य अवधारणा

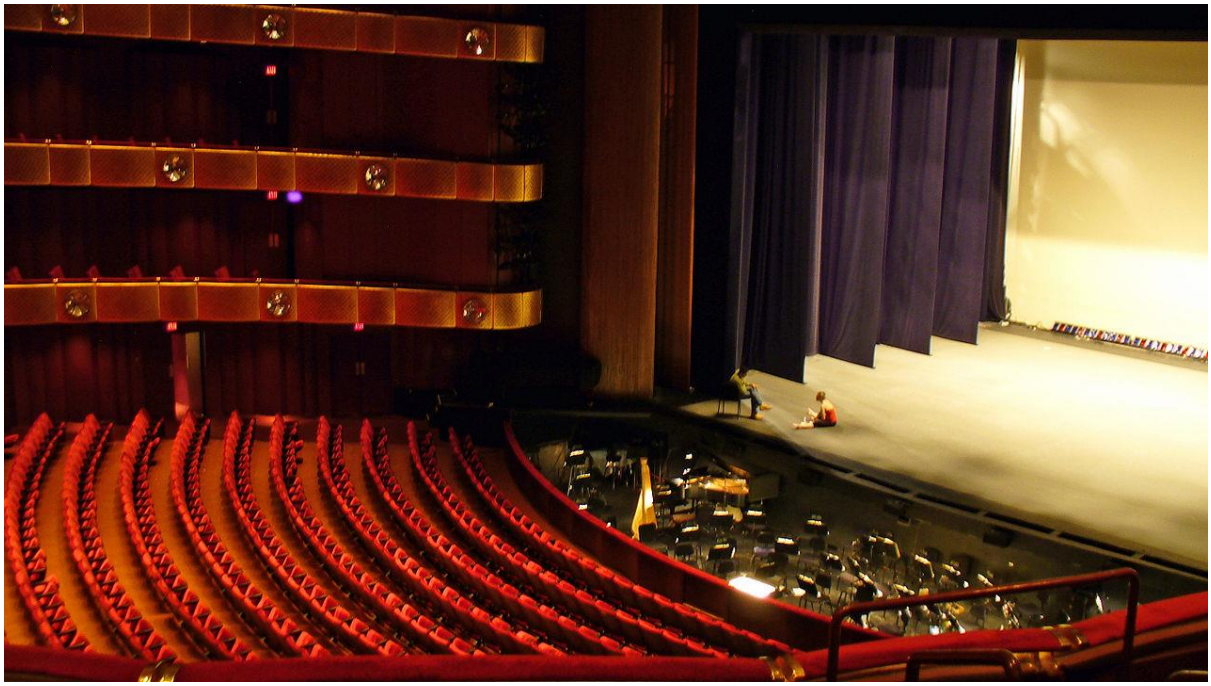

यूनान और रोम की प्राचीन सभ्यता में हम चौथी शती ई. पूर्व में रंगमंच होने की कल्पना कर सकते हैं। इतिहास प्रसिद्ध डायोनीसन का थिएटर एथेंस में आज भी उस काल की याद दिलाता है। एक अन्य थिएटर एपिडारस में है, जिसका नृत्यमंच गोल है। 364 ई. पूर्व रोमवाले इट्रस्कन अभिनेताओं की एक मंडली अपने नगर में लाए और उनके लिए 'सर्कस मैक्सियस' में पहला रोमन रंगमंच तैयार किया। इससे कल्पना की जाती है कि इट्रूरियावालों से ही (जिनका उद्गम विवादग्रस्त है) नाट्यकला और फलत: रंगमंच का प्रारंभिक रूप रोम में आया। सीज़र (कैसर) आगस्टस (दूसरी शती ई.पू.) ने रोम को बहुत उन्नत किया। पांपेई का शानदार थिएटर तथा एक अन्य (पत्थर का) थिएटर उसी के बनवाए बताए जाते हैं।

प्रमुख चरण:

१. रोमीय परंपरावाला विसेंजा रंगमंच (1580-85 ई.), जिसमें बाद के दीवार के पीछे वीथिकाएँ जोड़ दी गई थीं;

२. सैवियोनेटा में स्कमोज़ी ने इन वीथिकाओं को मुख्य रंगमंच से मिला दिया (1588 ई.);

३. इमिगो जोंस ने बाद में इन्हें रंगमंच ही बना दिया तथा

४. आगे चलकर (1618-19 ई.), परमा थियेटर में, रंगमंच पीछे हो गया और पृष्ठभूमि की चित्रित दीवार आगे आ गई।

लगभग दूसरी शती ईसवी में रंगमंच कामदेव का स्थान माना जाने लगा। ईसाइयत के जन्म लेते ही पादरियों ने नाट्यकला को ही हेय मान लिया। गिरजाघर ने थिएटर का ऐसा गला घोटा कि वह आठ शताब्दियों तक न पनप सका। कुछ उत्साही पादरियों ने तो यहाँ तक फतवा दिया कि रोमन साम्राज्य के पतन का कारण थिएटर ही है। रोमन रंगमंच का अंतिम सन्दर्भ 533 ई. का मिलता है। किंतु धर्म जनसामान्य की आनंद मनाने की भावना को न दबा सका और लोकनृत्य तथा लोकनाट्य, छिपे छिपे ही सही, पनपते रहे। जब ईसाइयों ने इतर जातियों पर आधिपत्य कर लिया, तो एक मध्यम मार्ग अपनाना पड़ा। रीति रिवाजों में फिर से इस कला का प्रवेश हुआ। बहुत दिनों तक गिरजाघर ही नाट्यशाला का काम देता रहा और वेदी ही रंगमंच बनी। 10 वीं से 13 वीं शताब्दी तक बाइबिल की कथाएँ ही प्रमुखत: अभिनय का आधार बनीं, फिर धीरे-धीरे अन्य कथाएँ भी आईं, किंतु ये नाटक स्वतंत्र ही रहे। चिर प्रतिष्ठित रंगमंच, जो यूरोप भर में जगह जगह टूटे फूटे पड़े थे, फिर न अपनाए गए।

इतालवी पुनर्जागरण के साथ वर्तमान रंगमंच का जन्म हुआ, किंतु उस समय जहाँ सारे यूरोप में अन्य सभी कलाओं का पुनरुद्धार हुआ, रंगमंच का पुन: अपना शैशव देखना पड़ा। 14 वीं शताब्दी में फिर से नाट्यकला का जन्म हुआ और लगभग 16 वीं शताब्दी में उसे प्रौढ़ता प्राप्त हुई। शाही महलों की अत्यंत सजी धजी नृत्यशालाएँ नाटकीय रंगमंच में परिणत हो गईं। बाद में उद्यानों में भी रंगशालाएँ बनीं, जिनमें अनेक दीवारों के स्थान पर वृक्षावली या झाड़बंदी ही हुआ करती थी।

रंगमंच का विकास विसेंजा और परमा में बनी हुई रंगशालाओं से स्पष्ट परिलक्षित होता है। विसेंजा की ओलिंपियन अकादमी में एक सुंदर रंगशाला सन् 1580-85 में बनी, जिसपर छत भी थी। इसमें पीछे की ओर वीथिकाओं जैसे अनेक कक्ष बढ़ाए गए। सन् 1588 में सैवियोनेटा में स्कमोज़ी ने इन कक्षों को मुख्य रंगमंच से मिला दिया और धीरे-धीरे बाद में वे भी रंगमंच ही हो गए। आगे चलकर सन् 1618-19 में परमा थिएटर में समूचा रंगमंच ही पीछे कर दिया गया और पृष्ठभूमि की चित्रित दीवार आगे आ गई, जिसपर बीच में बने एक बड़े द्वार से ही नाटक देखा जा सकता है। इस द्वार पर पर्दा लगाया जाने लगा। पर्दा उठने पर दृश्य किसी फ्रेम में जड़ी तस्वीर जैसा दिखाई पड़ता है। रंगमंच में भी दृश्यों के अनुकूल प्रभाव उत्पन्न करने के लिए अनेक पर्दे लगाए जाने लगे। मिलन का 'ला स्काला' ऑपेरा हाउस 18 वीं - 19 वीं शती में रंगमंच के विकास का आदर्श माना जाता है। इसमें पखवाइयाँ लगाने के लिए बगलों में स्थान बने हैं।

पुनर्जागरण सारे यूरोप में फैलता हुआ एलिज़बेथ काल में इंग्लैंड पहुँचा। सन् 1574 तक वहाँ एक भी थिएटर न था। लगभग ५० वर्ष में ही वहाँ रंगमंच स्थापित होकर चरम विकास को प्राप्त हुआ। इस कला की प्रगति की ज्योति इटली से फ्रांस, स्पेन और वहाँ से इंग्लैंड पहुँची।

रानी एलिज़वेथ को आर्डबर और तड़क भड़क से प्रेम था। इससे रंगमंच को भी प्रोत्साहन मिला। 1590 से 1620 ई. तक शेक्सपियर का बोलबाला रहा। रंगमंच विशिष्ट वर्ग का ही नहीं, जनसामान्य के मनोरंजन का साधन बना। किंतु प्रोटेस्टैट संप्रदाय द्वारा इसका विरोध भी हुआ और फलस्वरूप 1642ई. में नाट्य कला पर रोक लग गई। धीरे-धीरे दरबारियों और जनता का आग्रह प्रबल हुआ और रोक हटानी पड़ी। मार्लो, शेक्सपियर तथा जॉनसन आदि के विश्वविश्रुत नाटक पुन: प्रकाश में आए। ग्लोब थिएटर एलिज़बेथ कालीन रंगमंच का प्रतिनिधि है। इसमें पुरानी धर्मशालाओं का स्वरूप परिलक्षित होता है, जहाँ पहले नाटक खेले जाते थे। प्रांगण के बीच में रंगमंच होता था और चारों ओर तथा छज्जों में दर्शकों के बैठने का स्थान रहता था।

जब सारे यूरोप के रंगमंच लोकतंत्र की ओर अग्रसर हो रहे थे, संयुक्त राज्य, अमरीका, में अपनी ही किस्म के जीवन का स्वतंत्र विकास हो रहा था। चार्ल्सटन, फिलाडेल्फ़िया, न्यूयॉर्क और बोस्टन के रंगमंचों पर लंदन का प्रभाव बिलकुल नहीं पड़ा। फिर भी अमरीकी रंगमंचों में कोई उल्लेखनीय विशेषता नहीं थीं। उनके सामान्य रंगमंच घुमंतू कंपनियों के से ही होते थे। किंतु 18 वीं शती के अंत तक अनेक उत्कृष्ट काटि के भिएटर बन गए, जिनमें फ़िलाडेल्फ़िया का चेस्टनट स्ट्रीट थिएटर (1794ई.) और न्यूयॉर्क का पार्क थिएटर (1798ई.) उल्लेखनीय हैं। इनमें सुंदर प्रेक्षागृह बने और कुछ यूरोपीय प्रभाव भी आ गया। तदनंतर 20-25 वर्ष में ही अमेरिकी रंगमंच यूरोपीय रंगमंच के समकक्ष, बल्कि उससे भी उत्कृष्ट हो गया।

साहित्य की अन्य विधाओं में नाटक एक महत्त्वपूर्ण विधा है। जिसके माध्यम से न सिर्फ साहित्यिक अभिक्षमता का विकास होता है, बल्कि इस एक विधा से अन्याय विधाओं जैसे कविता, कहानी का कल्पना लोक भी जुडता है। नाटक की विषय-वस्तु जहाँ एक तरफ कहानी बुनने की कला में पारंगत करती है। वहीं संवादों की अदायगी में एक लय का समावेश, तथा भावातिरेक में संवादों का बोलना उसे कविता की पाद्यात्मकता के समीप ले जाता है।

नाटक एक सामूहिक प्रस्तुति है। नाटक की इसी संरचना के माध्यम से एक तरफ छात्र इस दृश्यात्मक विधा से स्वयं अपने को जोड कर देखने के साथ ही अन्य विषयों की एकरसता को भी तोडने में सफल होगा। साथ ही सहृदय की सामूहिक अवधारणा में वह एक दर्शक के रूप में साथ के लोगों की प्रतिक्रिया से अवगत होगा। जिससे उसे अपना आकलन करने में आसानी होगी। जिससे विषय के ज्ञान के साथ-साथ व्यवहारिकता का बोध सहज सरल रूप में आसानी से क्रियांवित हो सकेगा है। शरीर के सभी अंगों का संचालन, संवाद बोलने में सहजता होगी। जो व्यक्तित्व के विकास के साथ ही अभिव्यक्ति कौशल और आत्मविश्वास को बढायेगा है। जिससे समाज, परिवेश और स्वयं अभिनेता के संस्कारों का नया स्वरूप बनता है। अन्य

साहित्येतर विषयों के साथ जुड कर नाट्य शिक्षण के विशिष्ट उद्देश्य इस प्रकार सामने आते हैं –

(i) मौखिक वाचन और लेखनशक्ति का विकास

(ii) भावनाओं का उद्दात्तीकरण और उनका व्यक्तित्व निर्माण में सहयोग

(iii) विवेक सम्पन्नता और भावनात्मक अभिव्यक्ति को सही दिशा और दृष्टि प्रदान करना

(iv) नाटक की अभिनेयता से जुडकर साहित्य की अन्य विधाओं से ज्ञान अर्जित करना

(v) जीवन जगत तथा साहित्य के प्रति नवीन सौन्दर्यानुभूति प्रदान करना

(vi) नैतिक मूल्यों के विस्तार से वैश्विक मूल्यों का निर्माण करना

(vii) जीवन दर्शन के प्रति तार्किक विकास करना

(viii) पारम्परिक संस्कार तथा संस्कृति दर्शन इतिहास समाज शास्त्र से नई पीढी को अवगत कराना तथा उनके बीच उदार दृष्टि का विकास करना

(ix) साहित्यिक विकास के पठन-पाठन से भाषा के विविध रूपों तथा उच्चारण कौशल से परिचित करवाना

(x) रचनात्मक एवं सृजनात्मक प्रतिभा को पहचानना और उसका विकास करना

(xi) कल्पना लोक को तर्क संगत आधार पर रूपाकार करने की क्षमता का विकास करना

(xii) सामूहिक, सामाजिक संबंधों से स्वयं को जोड कर देखने की दृष्टि का विकास

कक्षा में नाटक शिक्षण हेतु प्रयुक्त सोपान :

निम्नलिखित सोपान स्वीकार किया जा सकता है—

पूर्वज्ञान परीक्षण

1. प्रस्तावना

उद्देश्य कथन

वाचन, आदर्श वाचन, अनुकरण वाचन

2. विषय प्रवेश

व्याख्या-वाचन, मौन वाचन

विचार-विश्लेषण

3. कक्षा कार्य निरीक्षण

4. आवृत्ति

5. गृहकार्य

विषय प्रवेश

वाचन व्याख्या

- प्रत्यक्ष वर्णन
- प्रतिमूर्ति द्वारा
- रेखा चित्र द्वारा
- चित्र द्वारा
- अंग संचालन
- वाक्य प्रयोग
- पर्यायवाची

विचार-विश्लेषण

- अनुवाद करना
- प्रसंग कथन द्वारा
- शब्द व्युत्पत्ति द्वारा
- शब्द विग्रह

उपसर्ग द्वारा **प्रत्यय द्वारा** **संधि द्वारा** **समास द्वारा**

विचार-विश्लेषण या बोधात्मक प्रश्न - शिक्षण का प्रभावकारी माध्यम – मनौवैज्ञानिकों ने यह सिद्ध कर दिया है कि श्रव्य-दृश्य माध्यम के शिक्षण को सर्वोत्तम रूप से प्रभावकारी बनाया जा सकता है। नाटक एक जीवंत श्रव्य-दृश्य उपादान है। इस महत्त्व को आधुनिक शिक्षा शास्त्रियों ने भी स्वीकार किया है।

वर्तमान शिक्षण-कार्यों में इसके प्रयोग ने संभावनाओं के नये द्वार भी खोलें है। इसकी महत्ता इसी से सिदध हो जाती है कि अब सभी विषयों को नाटक के माध्यम से पढाया जा सकता है। जो थोडी-बहुत परेशानी तकनीकी उपकरणों की वजह से होती है उसे जल्द दूर किया जाये। इस दिशा में निरंतर प्रयास भी किये जा रहें हैं। आचरण तथा व्यवहार की शिक्षा नाटक के माध्यम से सर्वोत्तम ढंग से दी जा सकती है। मिथक, पुराण और इतिहास की शिक्षा तो नाटक के माध्यम से जीवंत तथा साकार हो जाती है। दूरदर्शन पर तो इस तरह के प्रयोग को आत्मसात करके बहुत समय से दूरस्थ-शिक्षा का पाठयक्रम चला करके दूर- दराज के क्षेत्रों को इससे जोडने का अभियान चल रहा है। इस दिशा में भारतेंदु, प्रसाद, और हरिकृष्ण प्रेमी, मोहन राकेश, लक्ष्मी नारायण, गिरीश कर्नाड, साहनी तथा सुरेन्द्र वर्मा के अतिरिक्त अन्य नाट्ककारों की एक लम्बी फेहरिस्त है जिनके नाटकों का यथा स्थान प्रयोग किया जा सकता है।

प्रशिक्षण एंव समाधान - ऐसे प्रशिक्षकों की नियुक्ति जो कि नाटक की बारिकियों के साथ उनके शिक्षण में भी सिद्ध - हस्त हो।

- प्रत्येक कॉलेज व विश्वविदयालय में रंगमंचीय आवश्यकताओं के अनुसार मंच की व्यवस्था।

- सीखनें की प्रक्रिया का धैर्य व विश्वास अर्जन।

- रंगमंचीय उपकरणों और वेशभूषा, परिधान व प्रकाश- योजना की समुचित व्यवस्था।

- लोक कलाओं एंव मानवीय अभिरूचियों को समंवित करने की कला का उचित प्रशिक्षण।

- अब तक के नाट्य प्रयोगों का सम्यक ज्ञान व जानकारी।

- इस कार्य को एक अभियान बनाने के लिए यह जरूरी है कि इस विधा को पढने-पढानेंवालों को प्रशिक्षित करनें के लिए समय-समय पर कार्यशाला आयोजित की जाय।

- कक्षा में दृश्यों को दिखानें के लिए प्रयुक्त तकनीकी उपकरणों को चालानें की व्यवस्था के लिए विदयार्थी तथा अध्यापक को उचित प्रशिक्षण मिले।

'थियेटर पेडागॉजी यानी नाट्य शिक्षण से अंतर्विषयक अनुशासन पढ़ने में मदद सकती है । नाटक एक प्रदर्शनकारी कला विधा है। आज शिक्षामें कला समेकित अधिगम की बात एनसीईआरटी के दस्तावेजों में कही गयी है । कला के विभिन्न माध्यम शिक्षण को प्रभावकारी बनाते हैं । नाटकीयता से अधिगम विज्ञान, गणित, सामाजिक विज्ञान आदि को भी सरलतापूर्वकपढाया जा सकता है। नाटक भाषा शिक्षण में सबसे ज्यादा प्रभावकारी और चुनौतीपूर्ण है।

वर्तमान परिदृश्य में नाटक को आधुनिक सामाजिक, धार्मिक, ऐतिहासिक कोटि में बांधना पर्याप्त नहीं है। विषय-वस्तु की दृष्टि से मैथिली नाटक को ऐतिहासिक पौराणिक, सामाजिक, मनोवैज्ञानिक, शैक्षिक आदि भेद किया गया है । समस्या प्रधान नाटक का चलन भी मौजूद है।

आधुनिक नाटकों के चार भेद स्वीकृत किए गए हैं —

- ♦ गीतिनाट्य
- ♦ रेडियो नाटक
- ♦ दूरदर्शन नाटक
- ♦ एकांकी नाटक

इस नाटय कार्यशाला का उद्देश्य विद्यार्थियों का सर्वांगीण विकास है ताकि उन्हें कक्षा कक्ष से लेकर उच्चारण, अभिनय, वाचन, आंगिक भाषा और अध्यापन शैली का सम्पूर्ण विकास करना है।

उद्देश्य -

1. विभिन्न जीवन दर्शन का ज्ञान नाटक के माध्यम से।
2. संवाद शिक्षा : समाज के अनेक आयु वर्ग, ज्ञानवर्ग के संग किसी प्रकार के व्यवहार करना, संवाद शैली के विकास से अपनी बात रखने में दक्षता।
3. अनुकरणशीलता : अनुकरण मानव समाजक स्वाभाविक गुण है । नाटक द्वारा अनुकरण की तृप्ति होती है । छात्र कलाकार संवाद अनुकरण द्वारा सीखेंगे और प्रयोग करेंगे।
4. वैयक्तिक स्वभाव का अध्ययन : नाटक शिक्षण द्वारा व्यक्ति स्वभाव का ज्ञान करना अध्ययन करना और सीखना आसान होगा।
5. विद्यार्थी को विभिन्न परिस्थिति का ज्ञान होगा और उसका समाधान करना सीख सकते हैं।
6. भावाभिव्यक्ति : नाटकमें शब्द प्रयोग भाव के अनुसार होता है। नाटकमें गति-यति, विराम, आरोह-अवरोह भाव के अनुकूल प्रस्तुत किया जाता है ।
7. स्वस्थ मनोरंजन : नाटक द्वारा विद्यार्थी को स्वस्थ मनोरंजन प्रदान किया जाता है ।
8. विद्यार्थीमे अभिनय कला विकसित होता है और निपुणता आती है।
9. विद्यार्थी प्राचीन एवं आधुनिक संस्कृति के यथार्थ जीवन से परिचित होते हैं ।
10. विद्यार्थीशब्द भंडार, सूक्ति भंडार संवाद लेखन और कथा के नाट्यकला कौशल में वृद्धि होती है ।
11. विद्यार्थी के निरीक्षण, कल्पनाशीलता, सृजनात्मकता, विवेचन तथा बोध क्षमताक विकास ।

दस दिवसीय नाट्य कार्यशाला का आयोजन

दस दिवसीय नाट्य कार्यशाला का आयोजन

- रिहर्सल
- आंगिक अभ्यास
- नाट्य संगीत का अभ्यास
- नृत्य कौशल का अभ्यास
- सम्वाद का अभ्यास
- वस्त्र विन्यास के साथ अभ्यास
- प्रकाश एवं ध्वनि के साथ अभ्यास

दस दिवसीय थियेटर कार्यशाला में एक नाटक की पूरी तैयारी की गयी। यह नाटक संस्कृत में लिखित माहामात्य वत्सराज लिखित 'हास्य चूडामणि' जिसे पारम्परिक लोक शैली में विकसित करके बुंदेली मिश्रित हिंदी में प्रस्तुत किया गया। विहान की टीम श्री सौरभ अनंत के निर्देशन में इसे खेला गया। क्षेत्रीय शिक्षा संस्थान भोपाल के बीए बीएड पंचम सत्र के विद्यार्थियों ने इसमें भाग लिया और सफलतापूर्वक इस नाटक का मंचन किया ।

पात्र परिचय -

1. Anchita Mishra - KAPATKELI
2. Surabhi Acharjee - MADANSUNDARI
3. Dhaval - KAUNDINYA
4. Rajshree Bhati - KAPATKELI'S DASI
5. Ritika Ojaswi - KAPATKELI'S SEWIKA
6. Mayank Gajbhiye - Baba Gyaanrashi
7. Priya Yadav - KUSUMIKA
8. Anushree Sirothiya - PALLAVIKA
9. Devansh Diwakar Rao - KALAKARANDAK
10. Muskaan Jethva - Tehsildar and chor
11. Tanvi Sharma - Gaon ki ladki
12. Muskan Bani - Madan sundari ki sevika
13. Chanchal Makwey - Kapatkeli's Sevika
14. Robina Roy - Young villager
15. Divya Raut - Gav ki Bahu
16. Divyanshi Agrawal - Fulwari
17. Namrata - Ganv ki amma
18. Indu Patel - Goan ki ladki
19. Omkar Dhengre - MUDGARAK
20. Sumedh Tayade - Sevak
21. Amarnath Narange - Sevak, Mukhiya
22. Jitendra Yadav - Sevak
23. Swapnil Gajbhiye - Sevak

अभ्यास चित्रावली

रिहर्सल

Rig Veda, 1.89.1
विद्यया ऽमृतमश्नुते
Let noble thoughts Come to us from every Side
श्रेष्ठ भारत

रिहर्सल

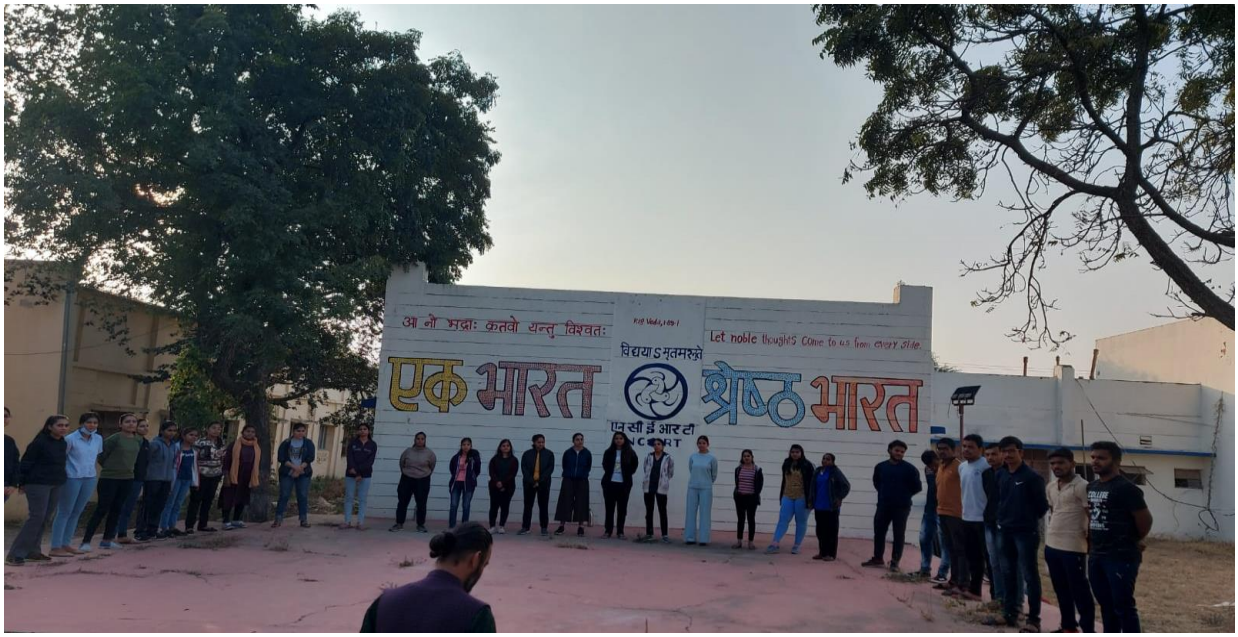

आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतः
Rig Veda, I-89-I
Let noble thoughts come to us from every side.
विद्ययाऽमृतमश्नुते
एक भारत
श्रेष्ठ भारत
एन सी ई आर टी

नाटक का मंचन

खबरों में नाटक

थिएटर वर्कशॉप में तैयार नाटक हास्य चूड़ामणि का मंचन आज

सिटी रिपोर्टर | रीजनल एजुकेशनल इंस्टीट्यूट में 14 से 23 नवंबर तक थिएटर वर्कशॉप रखी गई थी। यह दस दिवसीय वर्कशॉप विशेष रूप से बीए, बीएड के पांचवे सेमेस्टर के स्टूडेंट्स के लिए थी। वर्कशॉप में 40 पार्टिसिपेंट्स शामिल हुए। इसमें एक्टिंग, बॉडी मूवमेंट, क्रिएटिव गेम्स, म्यूजिक और थिएटर से जुड़ी बातें पार्टिसिपेंट्स को सिखाई गईं। वर्कशॉप में नाटक हास्य चूड़ामणि तैयार किया गया है। इसका निर्देशन सौरभ अनंत ने किया। अब इस नाटक की प्रस्तुति मंगलवार शाम 4 बजे पीएसएससीआईवीई के ऑडिटोरियम में होगी। नाटक में गीत-संगीत की रचना हेमंत देवलेकर की है। जबकि इसके लेखक महामत्य वत्सराज हैं।

Drama in city क्षेत्रीय शिक्षा संस्थान में नाटक 'हास्य चूड़ामणि' का मंचन

धर्म में फैले पाखंड पर किया प्रहार

पत्रिका plus रिपोर्टर

भोपाल. क्षेत्रीय शिक्षा संस्थान सभागार में मंगलवार को नाटक 'हास्य चूड़ामणि' मंचित हुआ। मूल लेखक महामत्य वत्सराज हैं। लेखन और निर्देशन सौरभ अनंत का रहा। संगीत व गीत हेमंत देवलेकर ने दिया। नाटक संस्कृत प्रहसन है। डायरेक्टर ने बताया, यह नाटक हजार वर्ष पहले लिखा गया था।

इसे बुंदेली में किए जाने तक की यात्रा, कथावस्तु के नाट्य रूपान्तरण, गीत संगीत, संवाद, अभिनय और दृश्य चुनौतीपूर्ण रहे हैं। महामात्य वत्सराज का जन्म बुंदेलखंड में हुआ था, इसलिए इस प्रहसन के लिए बुंदेली भाषा का प्रयोग किया गया।

डेढ़ घंटे में 40 कलाकारों का अभिनय: नाटक में दिखाया गया कि कलाकरंडक एक गणिका कपटकेली के आभूषणों की गठरी चोरी करता है। कपटकेली की पुत्री मदनसुंदरी का प्रेमी कलाकरंडक अपनी चोरी पकड़े जाने से बचने के लिए ज्ञानराशि नामक साधु के पास इसे छोड़ देता है। इधर, ज्ञानराशि भी एक पाखंडी है जिसके पुरखे भी जप-तप से जादू-टोना करना जानते थे। अतीत में किए गए अपने अपराध से बचने वह गांव-गांव घूमता है और अपने शिष्य कौण्डिन्य के साथ नगर में आता है। डेढ़ घंटे के इस नाटक में में 40 कलाकारों ने अभिनय किया।

मदनसुंदरी को मोहित करने बनाया ताबीज

इधर, साधु की ख्याति से प्रसन्न होकर कपटकेली चोर का पता लगाने के लिए साधु के पास जाती है। साधु मदनसुंदरी के सौंदर्य पर मोहित हो जाता है और उसे अपने वश में करने के लिए एक ताबीज का निर्माण करता है। ज्ञानराशि का शिष्य उस ताबीज पर कपटकेली का नाम लिख देता है और कपटकेली ज्ञानराशि पर मोहित हो जाती है। ज्ञानराशि का पाखंड हास्य के चरम पर पहुंचता है जब अपने आप को बचाने के लिए वह विभिन्न तरीके अपनाते हुए इस परिस्थिति से स्वयं को उबारने के प्रयत्न करता है।

City भास्कर
भोपाल, बुधवार, 24 नवंबर 2021 | 7

बुंदेली नाटक में सिर्फ एक डायलॉग मलयाली क्योंकि कलाकार को नहीं आती थी हिंदी

वह डायलॉग था- एक बेरैं हमाये गांव में भी ऐसई चोरी भई थी...

सिटी रिपोर्टर . भोपाल

मंगलवार की रीजनल इंस्टीट्यूट ऑफ एजुकेशन (आरआईई) के ऑडिटोरियम में बुंदेली गीतों और संगीत के साथ नाटक हास्यचूड़ामणि खेला गया, तो दूसरी ओर रंगश्री लिटिल बैले ट्रुप में नाटक जूते की खट-पट सुनाई दी। हास्यचूड़ामणि में खास यह था कि इसमें मंच पर प्रोफेशनल आर्टिस्ट नहीं, बल्कि बीए और बीएड की पढ़ाई कर रहे 40 स्टूडेंट्स नजर आए। इन सभी ने पहली बार एक्टिंग की थी। इसका निर्देशन सौरभ अनंत ने किया।

चैलेंजिंग था ये 10 दिन का टास्क

हास्यचूड़ामणि के निर्देशक सौरभ ने बताया कि 10 दिन की थिएटर वर्कशॉप में महाराष्ट्र, गुजरात और साउथ इंडिया के स्टूडेंट्स भी थे, उन्हें बुंदेली डायलॉग सिखाना चैलेंजिंग रहा। साउथ की रॉबिना को एक डायलॉग बुंदेली में बोलना था, लेकिन काफी प्रेक्टिस पर भी जब वे नहीं बोल पाईं तो इसे मलयाली में ही बोला।

एक सीन जोड़ा, ताकि सभी मंच पर आएं

नाटक के सभी 40 कलाकार मंच पर आ सकें, इसलिए नए सीन भी जोड़े। इसमें से ही एक सीन है गांव की चौपाल का, इस चौपाल में सभी गांव में हो रही चोरियों पर चर्चा करते हैं।

जूतों की वजह से खत्म हो जाती है दौलत

नंद किशोर आचार्य का लिखा नाटक जूते में एक सौदागर गुलामों को खाना-कपड़े देता था लेकिन जूते नहीं। कासिम ने होशियारी से जूते हासिल कर लिए, तो होशियारी देख सौदागर अपनी बेटी की शादी उससे कर देता है। फिर कासिम जूते को ही अपना भाग्य समझ लेता है। कासिम की सारी दौलत जूते के पीछे ही खत्म हो जाती है।

'हास्य चूड़ामणि' में पाखंडी साधुओं से बचने का दिया संदेश

भोपाल। क्षेत्रीय शिक्षा संस्थान सभागार में मंगलवार को नाटक 'हास्य चूड़ामणि का मंचन किया गया। इसके मूल लेखक महामात्य वत्सराज हैं। इसका लेखन और निर्देशन सौरभ अनंत ने किया, वहीं संगीत व गीत हेमंत देवलेकर ने दिया है। नाटक एक संस्कृत प्रहसन है। डेढ़ घंटे की अवधि वाले इस नाटक में लोगों को पाखंडी साधुओं से बचने का संदेश दिया गया।

Expert comment / Resource persons comment

Hasya Chudamani Skit

I Dr Saurabh Kumar as a resource person regularly visited the practice program on Hasya Chudamani.

The skit is full of fun and encompasses the story of Hasya Chudamani

In this skit the thief stolen the bag (motari) and the whole story revolves around the theft event.

From the first day onward the participants learns to act efficiently at each and every act participants gave their full potential to learn the act.

They are very nicely reflect the old skit with present situation.

Participants learn the dialogue intelligently and act as natural actor skit is full of different songs and Every participant plays / or act their part very nicely.

Their expression are nicely reflected.

The performance of the students was appreciable and up laudable.

Dr Saurabh Kumar

Asst. Prof. (Education)

RIE Bhopal.

Expert comment / Resource persons comment

The Play ‘Hasya Chudamani’ performed by the student of RIE Bhopal was written by Vatsraj in the 12th century in Sanskriti but still it is relevant in present times.

The play narrates about the preventing evils in the society which are still relevant practical in contemporary India.

The play is a satire which talks about the unmindful people who are blinded by lust ambition and greed.

The play has been translated in Bundeli and performed in Bundeli style in the form of Ballad. The play is interesting watch as it makes use of various stage craft and techniques.

The use of profs, music, voice modulation and articulation by student, dance and music makes the play humours and interesting is watch. The energy and Enthusiasm of students is no less than the audience watching the play.

The student really deserve appreciation an aptitude for their beautiful, expressions which the accomplished without any hesitation It was really a pleasure watching the play ad being a part of it .

Dr. Shivani Saini

THEATER WORKSHOP

REPORT

- Priya is going really well.
- Two girls on the right side are going flat.
- Blue t-shirt girl its looking straight.
- 3rd girl in second row from left.
- Clumsiness
- Grey t-shirt girl.
- Best part- Kapatkeli.
- Boys could be better & Kandinya.
- Babba is doing really great.

Mayank

Student

B.A. Bed. 5 sem

On comparing the students with the first day when the started practicing and the last day of rehearsal the student have undermine the lot o transformation whether be it acting skills speaking skills or dance and music skills the transformation is visible. The confidence, working in team, co-ordination is visible in student while watching the play.

Anchita Mishra

Student

B.A. Bed. 5th sem

Youtube Link of the Play:

https://www.youtube.com/watch?v=riALa9mfT4U

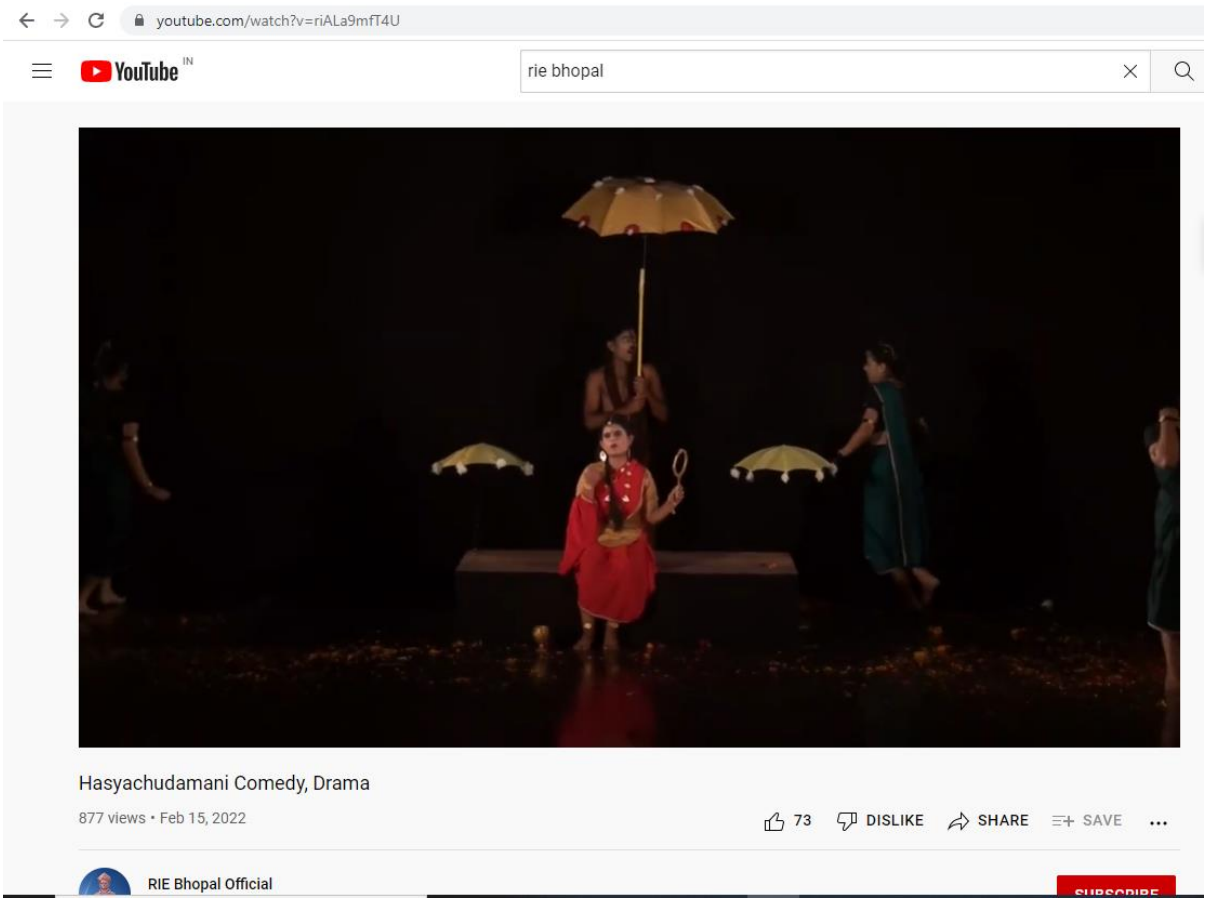

RIE, Bhopal YouTube Link:
https://www.youtube.com/channel/UCKtexVk18fDvUKi4sYGtRRg

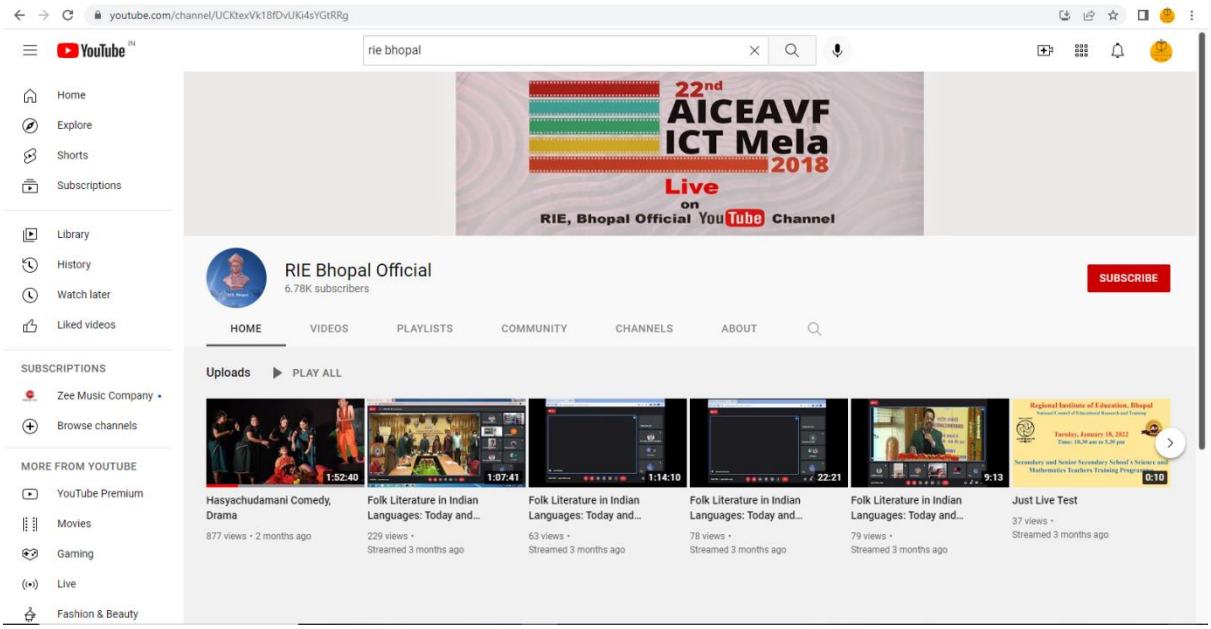

XXXXXXXXXX